

'बच्चों का खेल' ही 'काम' है....

यह स्टेनर-वाल्डर्फ प्रारम्भिक बाल्यावस्था शिक्षा का दृष्टिकोण है

जी. मणिवन्नन

अपने बचपन के दिनों को याद करिए। सड़क पर बेपरवाही से सनसनाते जाते हुए, छोटे–छोटे निकर पहने, चोटिल घुटनों और चेहरे पर विजयी भाव लिए, हाथ में लकड़ी की डण्डी लेकर उससे पुराने खराब हो चुके सायकिल के चकों को चलाते हुए हम बच्चे। हम दरवाजे की सीढ़ियों पर खड़े होकर अनगिनत तरीकों से "किनारे पर–नदी में" का खेल खेला करते। हम नीचे बैठकर पारम्परिक खेल खेलते थे जैसे पाँच गोटियों से खेला जाने वाला गित्ता, इमली के बीजों या सीपियों से खेला जाने वाला चंगा–अष्टा। हम झुण्ड बनाकर घूमा करते और आम और अमरूद तोड़ते फिरते। हम भागते, खेलते, हँसते, पेड़ों पर चढ़ते, गिरते और फिर अपने पैरों पर खड़े हो जाते और सबसे महत्त्वपूर्ण बात कि हम खूब पसीना बहाते। माता–पिता द्वारा घर वापस आ जाने की एक पुकार लगती और हम घर के अन्दर होते, मुँह–हाथ धोते और पढ़ाई करने बैठ जाते या फिर पूरे परिवार के साथ मिलकर सादा भोजन करते। उन दिनों में टीवी इतना आम नहीं था।

अब उस वक्त से 25 साल आगे बढ़कर आज के समय पर आ जाएँ। शहरी जीवन ऐसा है कि उसने सड़कों पर कारों की संख्या को दोगुना कर दिया है। छोटे परिवारों का मतलब है कि बड़े भाई–बहन अब छोटे भाई–बहनों का खयाल नहीं रखते, और उनकी जगह घर में रहने वाली बाइयों ने ले ली। आज के परिष्कृत और तकनीकी खिलौने बच्चे को चलने–फिरने या सृजनशील होने का विरले ही मौका देते हैं, वे पहले कई बार हो चुकी क्रिया को ही बटन दबाने पर अनन्त रूप से दोहराते रहते हैं। बूढ़ी काकी द्वारा चिथड़ों से बनाई गई गुड़िया की जगह बार्बी डॉल्स ने ले ली है। खेलने के स्थान बिलकुल साफ–सुथरे, सुरक्षित और कल्पना से रिक्त होते हैं। यह कहावत "आवश्यकता आविष्कार की जननी होती है", आज के समय पर लागू नहीं होती।

अधिकांश माता–पिता अपने घरों से दूर काम करने और धन कमाने में व्यस्त रहते हैं ताकि वे उस धन से अपने बच्चों को अच्छी से अच्छी सुविधाएँ दे सकें। हालिया समय में माता–पिताओं में एक और नई प्रवृत्ति दिखाई देती है कि वे बचपन से छुटकारा पाने की जल्दी में रहते हैं, जितना जल्दी हो सके बचपन को विदा करना चाहते हैं। माता–पिताओं में और स्कूलों में भी 5 साल या उससे भी कम उम्र के बच्चों का प्राथमिक विद्यालय में नामांकन कराने की हड़बड़ाहट है, जिसके पीछे उनकी यह महसूस करने की भावना होती है कि उनके बच्चे बहुत होशियार हैं। शोध से पता चलता है कि जल्दी दाखिला करा दिए गए बच्चे पहले कुछ सालों में तो अच्छी प्रगति दिखा सकते हैं, पर बाद की कक्षाओं में होने वाली पढ़ाई के साथ कदम–ताल मिला कर नहीं चल पाते। क्योंकि उन्हें वस्तुतः एक 'छोटे–से दिमाग' में जानकारी की भरमार का संग्रह करने में दिक्कत होती है। साथ ही साथियों के आगे निकल जाने का दबाव और अच्छा न करने पर माता–पिता की अपेक्षित नाराजगी जैसे कारणों से भी अन्ततः बच्चा चुक जाता है। फिर वह बस ट्यूशनों तथा और अधिक यांत्रिक व उबाऊ कामों में उलझकर रह जाता है। उसके पास 'खेलने' का समय ही कहाँ है?

हमें इस बात को समझना होगा कि बड़ों के विपरीत बच्चों की अपनी एक गति और समय का पैमाना होता है। आपने कब आखिरी बार एक पल रूककर, अपने बच्चे को आकाश में हवाई जहाज या झाड़ियों में कोई सोनपंखी कीड़ा दिखाया था या कि उसके साथ किसी चट्टान पर बैठकर तारों को निहारा था? सैली जैन्किन्सन अपनी किताब "द जीनियस ऑफ प्ले"[1] में कहते हैं, "बचपन बहुत लालित्य, मनोहरता और ऊपर वाले की कृपा का दौर होता है, जीवन को भर लेने का बड़ा मौका होता है, भविष्य के

[1] "The Genius of Play: Celebrating the Spirit of Childhood" by Sally Jenkinson. Hawthorn Press (First published in December 2001)

लिए बड़ी सम्पदा को संचित करने का वक्त होता है। क्या हम बच्चों के प्रति समानुभति रखने की – उनकी बातों को सुनने की, उनकी दुनिया में घुल–मिल जाने की – अपनी क्षमता खो चुके हैं? क्या हम उनकी सुरक्षा करने के साथ–साथ उन्हें स्वतंत्र नहीं छोड़ सकते? हर बच्चे को यह पता होता है कि वह क्या बनना चाहता या चाहती है। और अपने गहरे विवेक और भीतरी दृष्टि से मिलने वाली रोशनी के सहारे वे उस गुप्त भविष्य की ओर जाने वाली राह पर चल पड़ते हैं।"

मैं यहाँ मनोवैज्ञानिक डॉ. स्टुअर्ट ब्राउन का उद्धरण देना चाहूँगा, "बचपन का खेल, वैकल्पिक या पाठ्येत्तर होने के बजाय, किसी भी बच्चे के स्वस्थ विकास की यात्रा का अभिन्न हिस्सा होता है।" जो बच्चे अपने बचपन के सालों में काफी खेले होते हैं, उनके वयस्क जीवन में तनाव से जुड़ी बीमारियों का शिकार बनने की सम्भावना कम होती है, वे अपने घर या कार्य के परिवेशों में या फिर अपने वैवाहिक जीवन में ज्यादा बेहतर ढंग से सामंजस्य बैठा पाते हैं, और जीवन में आने वाली कठिन परिस्थितियों से निपटने के लिए जरूरी आत्मविश्वास तथा मानसिक मजबूती पैदा कर पाते हैं। खेलना जीवन में उतना ही महत्त्व रखता है जितना कि सोना और सपने देखना।

इसलिए वाल्डर्फ प्रारम्भिक बाल्यावस्था कार्यक्रम में, 'खेल ही काम है और काम ही खेल है' तथा किण्डरगार्टन घर का ही विस्तार भर है। कक्षाएँ भी फर्नीचरों से भरे अन्य किण्डरगार्टन परिवेशों के विपरीत, खुली जगह हैं। हम छोटे बच्चों को इधर–उधर जाने (उन मेजों और कुर्सियों के पीछे हिलने–डुलने, उठने–बैठने) से रोकने वाले कौन होते हैं, जबकि प्रकृति बस यही चाहती है कि वे घूमें–फिरें, दौड़ें–भागें? चिकित्सा विज्ञान ने आज यह साबित कर दिया है कि नए जन्मे बच्चों के अंग पूरी तरह से बने नहीं होते हैं, बल्कि बनने की प्रक्रिया में होते हैं। घूमना–फिरना और खेलना नए दाँतों के आने के समय तक शरीर के विकास के लिए तथा अंगों के पूर्णता प्राप्त करने या परिपक्व होने के लिए अत्यावश्यक है। अतः यहाँ दो प्रकार का खेल होता है, एक चहारदीवारी के भीतर खेला जाने वाला और दूसरा उसके बाहर खेला जाने वाला, जो किण्डरगार्टन शिक्षिका द्वारा व्यवस्थित की गई एक सुन्दर लय के साथ बदल–बदल कर चलता रहता है। बाहर खेला जाने वाला खेल 'श्वास छोड़ने' जैसा काम करता है। यह खेल सर्कल टाइम (वृत्त गतिविधि), स्टोरी–टाइम (कहानी का समय) तथा कलात्मक या दस्तकारी वाली गतिविधियों, जो मुख्यतः 'श्वास लेने' जैसी गतिविधियाँ होती है, के बीच–बीच में कराया जाता है। यह लय, जिसका लगातार और पूरी लगन से अनुसरण किया जाता है, बच्चे में प्राण शक्तियों का संचार करती है तथा उनमें अच्छी व पक्की आदतें पैदा होती हैं और उनकी लयात्मक स्मृति का निर्माण होता है जो इस विकासमान मनुष्य के पूरे जीवनकाल के लिए स्वास्थ्य का एक खजाना साबित होती है। उदाहरण के लिए खेल के समय के बाद वस्तुओं को हटाकर जगह को साफ करने का कार्य भी रोज की लय का हिस्सा बन जाता है और यह अपने द्वारा उपयोग की जा रही वस्तुओं की ओर श्रद्धा का भाव पैदा करने की तरफ पहला पाठ होता है।

डॉ. रूडॉल्फ स्टेनर[2] ने अपनी रचना 'स्पिरिचुअल साइंस' में इसे "पदार्थ में आत्मा की तलाश करना" कहा है। इसलिए स्टेनर किण्डरकार्टन के तीन 'आर' हैं, 'रिदम' (लय), 'रिपीटीशन' (दोहराव), और 'रेवेरेन्स' (श्रद्धा)। शिक्षिका खुद इन तीन आर का अनुसरण कर जीती है, इसलिए बच्चे भी उसके कामों, भाव–भंगिमाओं, विचारों और यहाँ तक कि कम्पनों का एक ऐसी गहरी अचेतन प्रक्रिया के तहत अनुसरण कर सकते हैं, जो उन पहले सात सालों में अनुकरण की गतिविधि के माध्यम से उनके मन में बैठ जाती है। कई पारम्परिक किण्डरगार्टन सीखने की इस स्वाभाविक अनुकरण रूपी प्रक्रिया से हटकर शिक्षण की एक कहीं अधिक मस्तिष्क–उन्मुख उपदेशात्मक प्रक्रिया की तरफ चले गए हैं। निर्देशन और शिक्षण बच्चे की स्वप्न चेतना को उपयुक्त समय से पहले ही जगा देते हैं जिसके कारण बाद के स्कूली वर्षों में बच्चा उद्देश्यपूर्वक सीखने में भारीपन और बोझ महसूस करता है। परिवेश की खूबसूरती, खेल में भीगी हुई उसकी सतत लय, भाषा निर्माण के अवसर, उन दक्ष हाथों के साथ काम करते हुए ज्ञान की शक्तियों का जागना और उस कच्ची उम्र में घर छोड़कर स्कूल आने का सम्पूर्ण आनन्द, ये किसी स्टेनर किण्डरगार्टन की ऐसी विशेषताएँ हैं जो दुनिया की किसी भी अन्य व्यवस्था में मौजूद नहीं हैं।

[2]www.rsarchive.org For a collection of the works, lectures given by Dr. Rudolf Steiner, the pioneer of Steiner-Waldorf education.







Photo courtesy: Smitha, Bangalore Steiner School

जी.मणिवन्नन बेंगलूरु स्टेनर स्कूल के संस्थापक न्यासी, किंगडम ऑफ चिल्ड्रन प्री–स्कूल के संस्थापक निदेशक और बेंगलूरु में होने वाले स्टेनर शिक्षा विचारगोष्ठी के समन्वयक हैं। उन्होंने विशेष शिक्षा में आर.सी.आई. (भारतीय पुनर्वास परिषद) योग्यता कोर्स और निवारक व सामाजिक–चिकित्सा शिक्षा में तीन वर्ष का कोर्स किया है। शिक्षाविद के रूप में वे एक शिक्षक–प्रशिक्षक भी हैं जो शिक्षकों में काम करने की एक भीतरी प्रेरणा को जगाने का काम करते हैं तथा बच्चों के साथ काम करते वक्त उन शिक्षकों को अपनी चरम सृजनशीलता को तलाशने में मदद करते हैं। उनकी अन्य रुचियाँ हैं परामर्श देना, कला, नाट्यमंच और संगीत। उनसे mani@heartnsoulfoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद** : भरत त्रिपाठी